डॉ. बिभा कुमारी, हिंदी विभाग

विश्वेश्वर सिंह जनता महाविद्यालय राजनगर, मधुबनी

बी.ए. प्रथम वर्ष हिंदी प्रतिष्ठा

द्वितीय पत्र

कबीर का काव्य

निर्गुण भक्ति के ज्ञानाश्रयी शाखा के संत कवि कबीरदास मानवता के पक्षधर थे। उन्होंने सदैव जाति – पाँति से ऊपर उठकर मानवता पर बल दिया। उनका समाज – दर्शन और उनकी भक्तिभावना बाह्याडंबर का विरोध करती है और मानवता पर विशेष बल देती है। कुरीतियों का उन्होंने सदैव खुलकर विरोध किया चाहे वह किसी भी धर्म से संबंधित कुरीति हो। उनकी भक्ति – भावना में सभी भक्तों को समान महत्व दिया गया है –

"जाति-पाँति पूछै नहि कोई, हरि को भजै सो हरि को होई"

कबीर की यह उक्ति भक्तिकालीन साहित्य से लेकर आज तक प्रासंगिक है। आधुनिक युग में आकर समानता आधारित समाज के निर्माण में उनकी इस उक्ति का अत्यधिक महत्व है। माया को कबीर ने अंधकार कहा है। माया ईश्वर से मिलन में बाधक है। जब तक प्रकाश नहीं होगा तब तक अंधकार दूर नहीं होगा। सच्चे गुरु से ज्ञान रूपी प्रकाश प्राप्त करके ही माया रूपी अंधकार को मिटाया जा सकता है। कबीर ने इसीलिए गुरु को बहुत अधिक महत्व दिया है। उन्होंने गुरु का स्थान ईश्वर से भी ऊपर माना है। अतः कहा है –

"गुरु गोविंद दोऊ खड़े काके लागूँ पाय।

बलिहारी गुरु आपने जिन गोविंद दियो बताय।।"

कबीर को पूर्ण विश्वास है कि ईश्वर यदि भक्त से रूठ भी जाय तो गुरु की कृपा से वे पुनः मान जाएँगे, परंतु यदि किसी भक्त से उसका गुरु नाराज़ हो जाये तो वह बेसहारा हो जाएगा।

-" हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर।"

कबीर अद्वैतवाद में विश्वास करते थे। वह जीव को उस परमतत्व ब्रम्ह का अंश मानते थे। परमतत्व का अंश एकदिन परमतत्व में ही मिल जाएगा। अंश को अपने अंशी में ही एक दिन व्याप्त हो जाना है। जीव और ब्रम्ह दोनों एक ही हैं, अतः ब्रम्ह की शोभा जीव की भी शोभा है।

-" लाली मेरे लाल की जित देखूँ तित लाल।

लाली देखन मैं गई मैं भी हो गई लाल।।"

कबीर की भक्तिभावना की अनन्य विशेषता है – रहस्यवादी भावना की भक्ति। उन्होंने जीव को पत्नी और ब्रम्ह को पति के रूप में चित्रित किया है। ईश्वर के पति रूप में गृह आगमन का सुंदर चित्रण इस प्रकार है –

“दुलहिनि गावहु मंगलाचार,

हम घरि आए राजा राम भरतार।”

कबीर का रहस्यवाद इनकी भक्तिभावना की अन्यतम विशेषता है। रहस्यवाद के अतिरिक्त काल का तीव्र बोध भी उनकी भक्तिभावना की बहुत बड़ी विशेषता है। उनका भाव – पक्ष जितना सशक्त है, उतना ही शिल्प पक्ष भी अनुपम है। यद्यपि वे स्वयं के निरक्षर होने की बात कहते हैं –

“मसि कागद छूयो नहीं कलम गही नहीं हाथ”

परंतु इनके जीवन अनुभव से प्राप्त ज्ञान को जब ये उक्ति में पिरोते हैं तो भाव पक्ष और शिल्प पक्ष दोनों ही जीवंत हो उठते हैं। कबीर की काव्य शैली अनुपम और अनूठी है। इस शैली की सबसे बड़ी विशेषता है इसकी सरलता और सहजता। उनकी भाषा में अनेक भाषाओं के शब्द हैं। अनेक विद्वानों ने इनकी भाषा को पंचमेल या खिचड़ी भाषा, सधुक्कड़ी भाषा कहा है। उनकी भाषा में पूर्वी, अवधी, राजस्थानी, खड़ी बोली और पंजाबी का मिश्रित रूप दिखाई पड़ता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कबीर को वाणी का डिक्टेटर कहा है। भावों की अभिव्यक्ति के लिए कबीर कहीं भी भाषा – संबंधी विवशता का अनुभव नहीं करते हैं।

हजारीप्रसाद द्विवेदी –

“भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। भाषा कबीर के सामने कुछ लाचार सी नज़र आती है।”

उनके काव्य में अलंकार, छंद आदि अनायास ही आए हैं। कहीं भी शिल्प के सौंदर्य को बढ़ाने के लिए उन्होंने छंदों अलंकारों का सायास प्रयोग नहीं किया। कबीर कट्टरपंथी लोगों को आडंबर प्रिय लोगों को सदैव समझाते रहे। उन्होंने उदारता और मानवता वाद पर बल दिया। कबीर ने सदैव कुरीतियों के त्याग का उपदेश दिया।

-“अरे इन दोउन राह न पाई

हिन्दुअन की हिंदुआई देखी तुरकन की तुरकाई।“

कबीर ने ब्रम्ह, जीव, माया, जगत, मोक्ष, रहस्यवाद इत्यादि के संबंध में अपने अनुभवजन्य विचारों को अपने काव्य में व्यक्त किया।